इम्तिहान पर क्षण भर

□ डॉ० विश्वम्भर व्यास

(हिन्दी विभाग, भूपाल नोबल्स महाविद्यालय, उदयपुर)

अभी कल की ही बात है एक विश्वविद्यालय के एक वरिष्ठ व्याख्याता को कतिपय छात्रों की हिंसक वृत्ति का कोप-भाजन होना पड़ा। इम्तिहान में उन्होंने ईमानदारी को अपनाया था, बस यही उनका अपराध था। कहा जा सकता है यह कोई नयी और चौंकाने वाली बात नहीं है, आये दिन ही ऐसा देखने-सुनने को मिलता है। भले यह न हो नयी और चौंकाने वाली बात.... लेकिन क्या यह सोचने और विचारने की बात नहीं है कि ऐसा क्यों होता है...क्या इम्तिहान बहुत जरूरी है—और इनकी परम्परित 'गडार' को मिटाने और नये रास्ते की तलाश की कुछ आवश्यकता है ?

विश्वविद्यालयों में छात्र-असन्तोष के यों अनेक कारण हो सकते हैं। कभी-कभी तो अकारण सी दीखने वाली बातें भी कारण बन जाती हैं अथवा बना दी जाती हैं। असन्तोष की परिणति होती है तोड़-फोड़, हिंसा, आगजनी आदि-आदि में। पिछले एक-दो दशक की इस प्रकार की घटनाओं पर ध्यान दें तो हमें पता लगता है कि इनकी जड़ में दो बातें प्रमुख रही हैं—छात्र-परिषदों के चुनाव और परीक्षाएँ। पिछले दो-तीन वर्षों में तो छात्र-असन्तोष से सम्बद्ध विविध वारदातें अपने चरम पर पहुँच गई-सी लगती हैं। विश्वविद्यालय-परिसरों में राजनैतिक दलों का अवैध प्रवेश भी कम चिन्तनीय नहीं है। बिहार, उत्तर-प्रदेश, दिल्ली आदि के सन्दर्भ में तो यह बात और भी जोर देकर कही जा सकती है। सच तो यह है कि सारी की सारी यह हिन्दी-पट्टी छात्र-असन्तोष के लिये बेहद बदनाम रही है। कभी-कभी तो छोटी बातों को लेकर असन्तोष उमड़ पड़ा है। आरक्षण आदि कारणों को लेकर हुई व्यापक तोड-फोड़ की कोई भी विचारवान् शिक्षाशास्त्री, प्रशासक अवहेलना नहीं कर सकता।

है न मजेदार बात यह कि एक साल में इम्तिहान आयोजित हो और दूसरे में परिणाम प्रकाशित। रहा सवाल पढ़ाई का, पर इसकी परवाह कौन करता है ? इसे तो अधिकाधिक हतोत्साहित करने में ही सबका कल्याण है। बिहार के विश्वविद्यालयों के सम्बन्ध में तो यह बात और भी अधिक सहज-भाव से कही जा सकती है। साल भर में मुश्किल से ४०-८० दिनों के बीच ही पढ़ाई हो सकी हो। छात्र-लोग कुलपतियों, प्राचार्यों का घेराव करने, उनके घरों को क्षतिग्रस्त करने, बसों को जलाने तथा इधर-उधर की सरकारी सम्पत्ति को तोड़ने-फोड़ने, नष्ट करने में लगे रहे। और इम्तिहान ? कौन देना चाहता है इम्तिहान ? सच बात तो यह है कि इम्तिहान अपनी सार्थकता बिल्कुल गँवा चुके हैं। लेकिन करें भी क्या ? गले की ऐसी हड्डी बन गये हैं ये, कि न अन्दर जाती है न बाहर निकलती है। असल में अनिवार्य बुराई हैं ये. कहें कि जिनसे पिण्ड छुड़ाना आसान नहीं है।

यों तो सभी विश्वविद्यालयों में थोड़ी-बहुत नकलें होती हैं, लेकिन पिछले दिनों मेरठ विश्वविद्यालय ने तो इस क्षेत्र में अपने विशिष्ट प्रतिमान स्थापित करने में सफलता हासिल करली हो जैसे। तत्सम्बन्धी वहाँ की रपटों को पढ़-सुनकर किसे वितृष्णा नहीं हो जायेगी। मेरठ से लगाकर बुलन्दशहर तक के ५३ परीक्षा केन्द्रों में सामूहिक नकल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का रौरव अभियान अपने चरम पर था जहाँ। मेरठ में स्थिति और भी विचित्र थी। बाँटने से पहले ही इन्वीजीलेटर्स के हाथों से जुझारू छात्रों ने कापियाँ झड़प ली थीं। तत्पश्चात् तो छात्रेच्छा बलीयसी। मजाल थी कोई उनसे कुछ कह दे। घर ले जाना था कुछ घर ले गये। नहीं तो पूर्वायोजित सहायकों के दिमाग का आसरा तो कहीं जाने से रहा। कुंजियों-किताबों का निर्बाध प्रयोग तो खैर एक मामूली बात थी। कहीं-कहीं तो प्राध्यापकों ने भी खुले मन से मदद देने में आत्मकल्याण माना। हाँ, बेचारे ईमानदार प्राध्यापक भय और उद्विग्नता की मनःस्थिति से परीक्षा भवन में हो रहा यह अनियन्त्रित उत्पात देख रहे थे।

वाइस चांसलर इन सब स्थितियों से एकदम अनभिज्ञ रहे हों, यह बात भी नहीं थी। पर वह निर्लिप्त और निर्विकार बने रहने में ही अपना भला देखते थे। वे जानते थे कि परीक्षाएँ स्थगित करना उनके हित में नहीं है। पर भाग्य ने अधिक दूर तक उनका साथ देने से इन्कार कर दिया। समाचार-पत्रों ने बड़ी बेरहमी से यह सब-कुछ प्रकाशित कर दिया। परिणाम यह हुआ कि लगभग २३ केन्द्रों की परीक्षाएँ बिल्कुल रद्द कर देनी पड़ीं।

परीक्षाएँ रद्द कर देने का यह निर्णय छात्रों के हलक के नीचे आसानी से उतर जाने वाला हो, यह बात नहीं थी। विरोध की लपटों ने मेरठ कालेज को ही स्वाहा करके दम लिया। एक पोस्ट आफिस भी अग्नि की भेंट हो गया। बेचारा वृद्ध पोस्टमास्टर बड़ी मुश्किल से जान बचा पाया।

लड़कों का यह हाल था तो लड़कियाँ कैसे पीछे रहतीं। सामूहिक नकल के इस पवित्र अनुष्ठान में वे भी कूद पड़ीं। उनकी शिकायत वाजिब थी कि यह सिर्फ लड़कों का ही मूल-अधिकार तो नहीं है न? और पिछली बार परीक्षाएँ जब पुनः आरम्भ हुईं तो उपद्रव और हिंसा अपने चरम पर थी। नकल का यह अनपेक्षित माहौल मेरठ विश्वविद्यालय की निजी विशेषता है, यह कहना अन्य विश्वविद्यालयों के प्रति अन्याय हो गया। बिहार के अधिकांश विश्वविद्यालयों में कमोबेश इन्हीं दृश्यों की पुनरावृत्ति हुई है, और आरा का तो नारा ही था—'चोरी से सरकार बनाई, चोरी से हम पास करेंगे।'

दूसरी आजादी के आगमन के साथ लोगों ने एक सन्तोष की साँस ली थी चलो अब सब कुछ ठीक-ठाक हो जायगा, पर प्रत्याशा पूरी नहीं हो पाई। यह एक ऐसा गम्भीर प्रश्न है कि राष्ट्र के अग्रणी विचारक भी चिन्ता किये बिना नहीं रह सके हैं। स्वयं जयप्रकाश बाबू की चिन्ता भी उनके वक्तव्यों से स्पष्ट झलकती थी। शिक्षा पद्धति में पूरी तरह से परिवर्तन पर जोर देते हुए तथा तत्सम्बन्धी दुरवस्था पर दुःख व्यक्त करते हुए वे कहते थे—'शायद छात्र-समाज यह भूल गया है कि १९७४ में स्वयं उनके द्वारा नीत आन्दोलन का यह एक मुख्य मुद्दा था।' इम्तिहान में बड़े पैमाने पर गलत तरीके इस्तैमाल करने के प्रश्न पर भी वे गम्भीर चिन्ता प्रकट करते हैं। अब तो दूसरी आजादी वाली सरकार भी हवा हो गई। वर्तमान सरकार से लोगों को बहुत अपेक्षाएँ थीं, किन्तु—? प्रश्न है आखिर इम्तिहान का उद्देश्य क्या है? याददाश्त, अभिव्यक्ति और यदाकदा निर्णय। बस यही तो न? पर आजकल के इम्तिहान तो छात्र की याददाश्त को ही सर्वाधिक अहमियत देते नजर आते हैं। इस बात को बिल्कुल नजरन्दाज कर दिया जाता है कि निर्णय भी उसका एक आवश्यक और महत्त्वपूर्ण पक्ष है। मजेदार बात तो यह है कि कहीं परीक्षार्थी अपनी राय व्यक्त करने का प्रयास करता है तो परीक्षक उसे गम्भीरता से नहीं लेता। विश्वविद्यालय मात्र परीक्षा केन्द्र बनकर रह गये हैं। परीक्षाएँ आयोजित करना, कापियाँ जँचवाने की व्यवस्था करना और जैसे-तैसे परिणाम प्रकाशित करवा देना। बस ये ही ध्येय रह गये हैं।

यह नहीं कि इम्तिहान के तौर-तरीकों में सुधार के प्रश्न को लेकर सोच-विचार हुआ ही नहीं है। समय-समय पर समितियाँ बनी हैं, गाते-ब-गाते गोष्ठियाँ हुई हैं, नाना प्रकार के नूतन तरीकों की तलाश की गई है। जैसे यह कि 'आब्जैक्टिव टैस्ट' का तरीका अपनाया जाय ताकि नकल की नारकीयता से मुक्त हुआ जा सके, पर यह भी कोई निरापद तरीका है, कहा नहीं जा सकता। 'ऑपन बुक एक्जामिनेशन' की पद्धति पर भी विचार किया गया। पर इससे क्या परख करना चाहते हैं? याददाश्त और निर्णय इन दो बातों का तो ऐसी पद्धति में कोई ही काम नहीं रह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाता। 'क्वेश्चन बैंक' का तरीका कारगर होगा—यह मानकर कई विश्वविद्यालयों ने इसे अंगीकार किया। लेकिन प्रत्याशित परिणाम सामने नहीं आ पाये। पिछले कुछ समय से इधर 'इन्टरनल एसैसमेन्ट' पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है। निश्चय ही टैस्टों की संख्या तो इसमें बढ़ जाती है मगर अपेक्षित उद्देश्य की प्राप्ति यहाँ भी संभव नहीं है। २० प्रतिशत सैशनल मार्क्स होते हैं, जबकि ८० प्रतिशत बाह्य परीक्षाओं पर निर्भर करते हैं। २० प्रतिशत में अंकों का लेन-देन एक हास्यास्पद, पर दिलचस्प प्रतिस्पर्द्धा को आमन्त्रित करने वाला होता है। लगता है शिक्षा के आधिकारिक विद्वान् और विशेषज्ञ अब परीक्षा के ऐसे ही किसी तरीके की तलाश में तल्लीन हैं, जिसमें अध्ययन को अधिकाधिक हतोत्साहित किया जा सके और हाँ परीक्षा-कर्म भी जिसमें आराम से आयोजित हो सके।

□

अणासवा थूलवया कुसीला,
मिउंपि चण्डं पकरेन्ति सीसा।

—उत्तरा० १।१३

आज्ञा में न रहने वाले, बिना विचारे कुछ का कुछ बोलने वाले शिष्य मृदु स्वभाव वाले गुरु को भी क्रुद्ध बना देते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org